

Chapter उन्यासी

भगवान् बलराम की तीर्थयात्रा

इस अध्याय में बतलाया गया है कि किस तरह बलदेव ने बल्लव को मार कर ब्राह्मणों को तुष्ट किया, फिर विविध पवित्र तीर्थस्थानों में स्नान किया और तदन्तर भीमसेन तथा दुर्योधन को युद्ध करने से रोकने का प्रयास किया।

नैमिषारण्य वन में मुनियों की यज्ञशाला में प्रतिपदा के दिन भीषण हवा चलने लगी, जिससे पीब की दुर्गन्ध फैलने लगी और धूल से हर वस्तु ओझल होने लगी। तभी बल्लव असुर हाथ में त्रिशूल लिए प्रकट हुआ। उसका विशाल शरीर अत्यधिक काला था और मुँह अत्यन्त भयावना था। भगवान् बलदेव ने उस असुर को अपने हल से पकड़ लिया और तब अपनी गदा से उसके सिर पर ऐसा भीषण प्रहार किया कि वह मर गया। ऋषियों ने बलदेव का यशोगान किया और उन्हें अनेक भेंटें दीं।

तब बलदेव ने अपनी तीर्थयात्रा प्रारम्भ की। इस अवधि में वे अनेक पवित्र तीर्थों में गये। जब उन्होंने कौरवों तथा पाण्डवों के बीच युद्ध की खबर सुनी, तो वे भीम तथा दुर्योधन के बीच द्वन्द्व युद्ध रोकने के प्रयास के लिए कुरुक्षेत्र गये। किन्तु उन दोनों की शत्रुता इतनी गहरी थी कि वे उन्हें युद्ध करने से रोक नहीं सके। यह समझ कर कि वह युद्ध विधि का विधान है, भगवान् बलदेव युद्धभूमि छोड़ कर द्वारका लौट आये।

कुछ काल बाद बलराम पुनः नैमिषारण्य वन में गये, जहाँ ऋषियों ने उनकी ओर से अनेक अग्नि-यज्ञ सम्पन्न किये। बदले में बलराम ने ऋषियों को दिव्य ज्ञान प्रदान किया और उन्हें अपनी शाश्वत पहचान बतलाई।

श्रीशुक उवाच

ततः पर्वण्युपावृत्ते प्रचण्डः पांशुवर्षणः ।

भीमो वायुरभूद्राजन्पूयगन्धस्तु सर्वशः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; ततः—तत्पश्चात्; पर्वणि—प्रतिपदा का दिन; उपावृत्ते—आने पर; प्रचण्डः—भयानक; पांशु—धूल; वर्षणः—वर्षा; भीमः—डरावनी; वायुः—हवा; अभूत्—उठी; राजन्—हे राजन् (परीक्षित); पूय—पीब की; गन्धः—गन्ध; तु—तथा; सर्वशः—सर्वत्र।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे राजन्, तब प्रतिपदा के दिन (शुक्लपक्ष का पहला दिन) एक प्रचण्ड तथा भयावना झंझावात आया, जिससे चारों ओर धूल बिखर गई और सर्वत्र पीब की दुर्गन्ध फैल गई।

ततोऽमेध्यमयं वर्षं बल्वलेन विनिर्मितम् ।

अभवद्यज्ञशालायां सोऽन्वदृश्यत शूलधृक् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; अमेध्य—गर्हित वस्तुएँ; मयम्—से पूर्ण; वर्षम्—वर्षा; बल्वलेन—बल्वल द्वारा; विनिर्मितम्—उत्पन्न किया गया; अभवत्—हुआ; यज्ञ—यज्ञ की; शालायाम्—शाला में; सः—वह, बल्वल; अन्वदृश्यत—इसके बाद प्रकट हुआ; शूल—त्रिशूल; धृक्—लिए हुए।

इसके बाद यज्ञशाला के क्षेत्र में बल्वल द्वारा भेजी गई घृणित वस्तुओं की वर्षा होने लगी।

तत्पश्चात् वह असुर हाथ में त्रिशूल लिए साक्षात् प्रकट हुआ।

तं विलोक्य बृहत्कायं भिन्नाञ्जनचयोपमम् ।

तप्तताम्रशिखाशमश्रुं दंष्ट्रोग्रभृकुटीमुखम् ॥ ३ ॥

सस्मार मूषलं रामः परसैन्यविदारणम् ।

हलं च दैत्यदमनं ते तूर्णमुपतस्थतुः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको; विलोक्य—देखकर; बृहत्—विशाल; कायम्—शरीर वाले; भिन्न—टूटा; अञ्जन—काजल का; चय—ढेर; उपमम्—सदृश; तप्त—जलता हुआ; ताम्र—ताँबे (जैसे रंग वाला); शिखा—चोटी; शमश्रुम्—तथा दाढ़ी; दंष्ट्रा—दाँत सहित; उग्र—भयावह; भृ—भौंहों के; कुटी—खाँचों से युक्त; मुखम्—मुख वाला; सस्मार—स्मरण किया; मूषलम्—अपनी गदा (मूसल); रामः—बलराम ने; पर—आमने-सामने; सैन्य—सेनाएँ; विदारणम्—फाड़ने के लिए; हलम्—अपना हल; च—तथा; दैत्य—असुर; दमनम्—दमन करने वाला; ते—वे; तूर्णम्—तुरन्त; उपतस्थतुः—प्रस्तुत किया, उपस्थित हुआ।

विशालकाय असुर काले कज्जल के पिंड जैसा लग रहा था। उसकी चोटी तथा दाढ़ी पिघले ताँबे जैसी थी और उसके चेहरे में भयावने दाँत थे तथा भौंहें गढ़े में घुसी थीं। उसे देखकर बलराम ने शत्रु-सेनाओं को खण्ड-खण्ड कर देने वाली अपनी गदा और असुरों को दण्ड देने वाले अपने हल का स्मरण किया। इस प्रकार बुलाये जाने पर उनके दोनों हथियार तुरन्त ही उनके समक्ष प्रकट हो गये।

तमाकृष्य हलाग्रेण बल्वलं गगनेचरम् ।
मूषलेनाहनत्क्रुद्धो मूर्ध्नि ब्रह्मद्रुहं बलः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको; आकृष्य—अपनी ओर खींच कर; हल—हल के; अग्रेण—अगले भाग से; बल्वलम्—बल्वल को; गगने—आकाश में; चरम्—विचरण करने वाले; मूषलेन—अपनी गदा से; अहनत्—प्रहार किया; क्रुद्धः—नाराज; मूर्ध्नि—सिर पर; ब्रह्म—ब्राह्मणों का; द्रुहम्—तंग करने वाला; बलः—बलराम ने।

ज्योंही बल्वल असुर आकाश से उड़ा, भगवान् बलराम ने अपने हल की नोंक से उसे पकड़

लिया और इस ब्राह्मण-उत्पीड़क के सिर पर अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपनी गदा से प्रहार किया।

सोऽपतद्भुवि निर्भिन्नललाटोऽसृक्समुत्सृजन् ।
मुञ्चन्नार्तस्वरं शैलो यथा वज्रहतोऽरुणः ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

सः—वह, बल्वल; अपतत्—गिर पड़ा; भुवि—पृथ्वी पर; निर्भिन्न—फट गया; ललाटः—कपाल; असृक्—रक्त; समुत्सृजन्—फव्वारे की तरह निकलता हुआ; मुञ्चन्—छोड़ते हुए; आर्त—पीड़ा के; स्वरम्—शब्द; शैलः—पर्वत; यथा—जिस तरह; वज्र—विद्युत्पात से; हतः—प्रहार किया हुआ; अरुणः—लाल-लाल।

बल्वल पीड़ा से चिल्ला उठा और पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसका सिर फट गया और उसमें से

खून का फव्वारा निकलने लगा। वह विद्युत्पात से प्रताड़ित लाल (गेरू) पर्वत जैसा लग रहा था।

तात्पर्य : आचार्यों के अनुसार वह असुर रक्त से लाल-लाल दिख रहा था, मानो गेरू से लाल हुआ कोई पर्वत हो।

संस्तुत्य मुनयो रामं प्रयुज्यावितथाशिषः ।
अभ्यषिञ्चन्महाभागा वृत्रघ्नं विबुधा यथा ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

संस्तुत्य—प्रशंसा करके; मुनयः—मुनिगण; रामम्—बलराम की; प्रयुज्य—प्रदान करके; अवितथ—अच्युत; आशिषः—वर; अभ्यषिञ्चन्—जैसे उत्सव में नहलाया हुआ; महा-भागाः—महापुरुष; वृत्र—वृत्रासुर का; घ्नम्—मारने वाला (इन्द्र); विबुधाः—देवतागण; यथा—जिस प्रकार।

पूज्य ऋषियों ने हार्दिक स्तुतियों से बलराम का सम्मान किया और उन्हें अमोघ वर दिये। तब

उन्होंने उनका अनुष्ठानिक स्नान कराया, जिस तरह देवताओं ने इन्द्र को औपचारिक स्नान कराया था, जब उसने वृत्र का वध किया था।

वैजयन्तीं ददुर्मांलां श्रीधामाम्लानपङ्कजां ।
रामाय वाससी दिव्ये दिव्यान्याभरणानि च ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

वैजयन्तीम्—वैजयन्ती नामक; ददुः—दिया; मालाम्—फूलों की माला; श्री—लक्ष्मी के; धाम—घर; अम्लान—कभी न मुरझाने वाली; पङ्कजाम्—कमल-फूलों से बनी; रामाय—बलराम को; वाससी—वस्त्रों की जोड़ी (ऊपरी तथा निचले); दिव्ये—दिव्य; दिव्यानि—दिव्य; आभरणानि—आभूषण; च—तथा ।

उन्होंने बलरामजी को कभी न मुरझाने वाली कमल के फूलों से बनी वैजयन्ती नामक माला दी, जिसमें लक्ष्मीजी रहती हैं। उन्होंने बलराम को दिव्य वस्त्रों की जोड़ी तथा आभूषण भी दिये।

अथ तैरभ्यनुज्ञातः कौशिकीमेत्य ब्राह्मणैः ।
स्नात्वा सरोवरमगाद्यतः सरयूरास्त्रवत् ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

अथ—तत्पश्चात्; तैः—उनके द्वारा; अभ्यनुज्ञातः—विदा किये गये; कौशिकीम्—कौशिकी नदी में; एत्य—आकर; ब्राह्मणैः—ब्राह्मणों के साथ; स्नात्वा—नहाकर; सरोवरम्—झील के निकट; अगात्—गये; यतः—जिसमें से; सरयूः—सरयू नदी; आस्त्रवत्—निकलती है।

तत्पश्चात् ऋषियों से विदा होकर भगवान् ब्राह्मणों की टोली के साथ कौशिकी नदी गये, जहाँ उन्होंने स्नान किया। वहाँ से वे उस सरोवर पर गये, जिससे सरयू नदी निकलती है।

अनुस्रोतेन सरयूं प्रयागमुपगम्य सः ।
स्नात्वा सन्तर्प्य देवादीन्जगाम पुलहाश्रमम् ॥ १० ॥

शब्दार्थ

अनु—पीछे-पीछे; स्रोतेन—धारा; सरयूम्—सरयू के किनारे-किनारे; प्रयागम्—प्रयाग तक; उपगम्य—आकर; सः—वह; स्नात्वा—स्नान करके; सन्तर्प्य—तर्पण करके; देव-आदीन्—देवताओं आदि को; जगाम—गया; पुलह-आश्रमम्—पुलह ऋषि की कुटिया में।

भगवान् सरयू नदी की धारा का अनुसरण करते हुए प्रयाग आये, जहाँ उन्होंने स्नान किया और देवताओं तथा अन्य जीवों को तर्पण करने का अनुष्ठान सम्पन्न किया। इसके बाद वे पुलह ऋषि के आश्रम गये।

तात्पर्य : पुलह आश्रम हरिक्षेत्र के नाम से भी विख्यात है।

गोमतीं गण्डकीं स्नात्वा विपाशां शोण आप्लुतः ।
गयां गत्वा पितृनिष्ठा गङ्गासागरसङ्गमे ॥ ११ ॥
उपस्पृश्य महेन्द्राद्रौ रामं दृष्ट्वाभिवाद्य च ।
सप्तगोदावरीं वेणां पम्पां भीमरथीं ततः ॥ १२ ॥

स्कन्दं दृष्ट्वा ययौ रामः श्रीशैलं गिरिशालयम् ।
 द्रविडेषु महापुण्यं दृष्ट्वाद्रिं वेङ्कटं प्रभुः ॥ १३ ॥
 कामकोष्णीं पुरीं काञ्चीं कावेरीं च सरिद्वराम् ।
 श्रीरन्गाख्यं महापुण्यं यत्र सन्निहितो हरिः ॥ १४ ॥
 ऋषभाद्रिं हरेः क्षेत्रं दक्षिणां मथुरां तथा ।
 सामुद्रं सेतुमगमत्महापातकनाशनम् ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

गोमतीम्—गोमती नदी में; गण्डकीम्—गण्डकी नदी में; स्नात्वा—स्नान करके; विपाशाम्—विपाशा नदी में; शोणे—शोण नदी में; आप्लुतः—घुस करके; गयाम्—गया; गत्वा—जाकर; पितृन्—अपने पितरों को; इष्ट्वा—पूजा करके; गङ्गा—गंगा; सागर—तथा समुद्र के; सङ्गमे—संगम में; उपस्पृश्य—जल का स्पर्श करके (नहाकर); महा-इन्द्र-अद्रौ—महेन्द्र पर्वत पर; रामम्—परशुराम को; दृष्ट्वा—देखकर; अभिवाद्य—सम्मान करके; च—तथा; सप्त-गोदावरीम्—सात गोदावरियों के मिलन स्थल पर (जाकर); वेणाम्—वेणा नदी; पम्पाम्—पम्पा नदी; भीमरथीम्—तथा भीमरथी नदी; ततः—तब; स्कन्दम्—भगवान् स्कन्द (कार्तिकेय) को; दृष्ट्वा—देखकर; ययौ—गया; रामः—बलराम; श्री-शैलम्—श्रीशैल; गिरि-श—शिवजी के; आलयम्—वासस्थान; द्रविडेषु—दक्षिणी प्रान्तों में; महा—अत्यन्त; पुण्यम्—पवित्र; दृष्ट्वा—देखकर; अद्रिम्—पर्वत को; वेङ्कटम्—वेङ्कट नामक (जो बालाजी का धाम है); प्रभुः—भगवान्; काम-कोष्णीम्—कामकोष्णी; पुरीम् काञ्चीम्—काञ्चीपुरम् को; कावेरीम्—कावेरी को; च—तथा; सरित्—नदियों के; वराम्—सबसे बड़े; श्री-रङ्ग-आख्यम्—श्रीरंग नामक; महा-पुण्यम्—अत्यन्त पवित्र स्थान; यत्र—जहाँ; सन्निहितः—प्रकट; हरिः—भगवान् कृष्ण (रंगनाथ के रूप में); ऋषभ-अद्रिम्—ऋषभ पर्वत; हरेः—भगवान् विष्णु के; क्षेत्रम्—स्थान; दक्षिणाम् मथुराम्—दक्षिणी मथुरा (मदुराई, देवी मीनाक्षी का धाम); तथा—भी; सामुद्रम्—समुद्र पर; सेतुम्—पुल (सेतुबन्ध); अगमत्—गया; महा—सबसे बड़े; पातक—पापों का; नाशनम्—नष्ट करने वाला ।

भगवान् बलराम ने गोमती, गण्डकी तथा विपाशा नदियों में स्नान किया और शोण में भी डुबकी लगाई। वे गया गये, जहाँ अपने पितरों की पूजा की। गंगामुख जाकर उन्होंने शुद्धि के लिए स्नान किया। महेन्द्र पर्वत पर उन्होंने परशुराम के दर्शन किये और उनकी स्तुति की। तत्पश्चात् उन्होंने गोदावरी नदी की सातों शाखाओं में स्नान किया। उन्होंने वेणा, पम्पा तथा भीमरथी नदियों में भी स्नान किया। फिर बलराम भगवान् स्कन्द से मिले और भगवान् गिरिश के धाम श्रीशैल गये। दक्षिणी प्रान्तों में, जिन्हें द्रविड़ देश कहा जाता है, भगवान् ने पवित्र वेङ्कट पर्वत, कामकोष्णी तथा कांची नामक शहर, पवित्र कावेरी नदी तथा अत्यन्त पवित्र श्रीरंग को देखा, जहाँ साक्षात् भगवान् कृष्ण प्रकट हुए थे। वहाँ से वे ऋषभ पर्वत गये, जहाँ पर कृष्ण भी रहते हैं और फिर दक्षिण मथुरा गये। तत्पश्चात् वे सेतुबन्ध गये, जहाँ बड़े से बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं।

तात्पर्य : वैसे तो लोग मृत पूर्वजों की पूजा करने गया जाते हैं, किन्तु जैसाकि श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि यद्यपि बलरामजी के पिता तथा पितामह जीवित थे तो भी उनके पिता का आदेश था कि वे गया में अपने पूर्वजों की ठीक से पूजा करें। वैष्णव तोषणी के आधार पर आचार्य ने

यह भी बतलाया है कि यद्यपि बलरामजी जगन्नाथपुरी के बहुत ही निकट थे फिर भी वे वहाँ नहीं गये क्योंकि वे श्रीकृष्ण, बलभद्र तथा सुभद्रा के स्वरूपों के साथ अपने स्वरूप की पूजा करने से उत्पन्न उलझन से बचना चाहते थे।

तत्रायुतमदाद्धेनूर्बाह्मणेभ्यो हलायुधः ।
 कृतमालां ताम्रपर्णीं मलयं च कुलाचलम् ।
 तत्रागस्त्यं समासीनं नमस्कृत्याभिवाद्य च ॥ १६ ॥
 योजितस्तेन चाशीर्भिरनुज्ञातो गतोऽर्णवम् ।
 दक्षिणं तत्र कन्याख्यां दुर्गा देवीं ददर्श सः ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ (सेतुबन्ध या रामेश्वरम में); अयुतम्—दस हजार; अदात्—दान में दी; धेनूः—गौवें; ब्राह्मणेभ्यः—ब्राह्मणों को; हल-आयुधः—जिसका हथियार हल है, बलराम ने; कृतमालाम्—कृतमाला नदी; ताम्रपर्णीम्—ताम्रपर्णी नदी; मलयम्—मलय; च—तथा; कुल-अचलम्—प्रमुख पर्वत श्रेणी; तत्र—वहाँ; अगस्त्यम्—अगस्त्य ऋषि को; समासीनम्—(ध्यान में) बैठे हुए; नमस्कृत्य—नमस्कार करके; अभिवाद्य—महिमा-गायन करके; च—तथा; योजितः—प्रदत्त; तेन—उसके द्वारा; च—तथा; आशीर्भिः—आशीर्वादों से; अनुज्ञातः—जाने की अनुमति पाकर; गतः—चले गये; अर्णवम्—समुद्र; दक्षिणम्—दक्षिणी; तत्र—वहाँ; कन्या-आख्याम्—कन्याकुमारी नामक; दुर्गाम् देवीम्—दुर्गादेवी को; ददर्श—देखा; सः—उसने।

सेतुबन्ध (रामेश्वरम) में भगवान् हलायुध ने ब्राह्मणों को दान में दस हजार गौवें दीं। फिर वे कृतमाला तथा ताम्रपर्णी नदियों एवं विशाल मलय पर्वत गये। मलय-श्रेणी में भगवान् बलराम को ध्यानमग्न अगस्त्य ऋषि मिले। ऋषि को नमस्कार करके भगवान् ने स्तुति की और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया। अगस्त्य से विदा होकर वे दक्षिणी सागर के तट पर गये, जहाँ उन्होंने कन्याकुमारी के रूप में दुर्गादेवी को देखा।

ततः फाल्गुनमासाद्य पञ्चाप्सरसमुत्तमम् ।
 विष्णुः सन्निहितो यत्र स्नात्वास्पर्शद्गवायुतम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; फाल्गुनम्—फाल्गुन; आसाद्य—पहुँच कर; पञ्च-अप्सरसम्—पाँच अप्सराओं की झील; उत्तमम्—उत्तम; विष्णुः—भगवान् विष्णु; सन्निहितः—प्रकट; यत्र—जहाँ पर; स्नात्वा—स्नान करके; अस्पर्शत्—स्पर्श किया (दान देते समय अनुष्ठान के रूप में); गव—गौवों को; अयुतम्—दस हजार।

इसके बाद वे फाल्गुन तीर्थ गये और उन्होंने पवित्र पञ्चाप्सरा सरोवर में स्नान किया, जहाँ साक्षात् भगवान् विष्णु प्रकट हुए थे। यहाँ पर उन्होंने और दस हजार गौवें दान में दीं।

ततोऽभिव्रज्य भगवान्केरलांस्तु त्रिगर्तकान् ।

गोकर्णाख्यं शिवक्षेत्रं सान्निध्यं यत्र धूर्जटेः ॥ १९ ॥
 आर्या द्वैपायनीं दृष्ट्वा शूर्पारकमगाद्वलः ।
 तापीं पयोष्णीं निर्विन्ध्यामुपस्पृश्याथ दण्डकम् ॥ २० ॥
 प्रविश्य रेवामगमद्यत्र माहिष्मती पुरी ।
 मनुतीर्थमुपस्पृश्य प्रभासं पुनरागमत् ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; अभिब्रज्य—यात्रा करके; भगवान्—भगवान्; केरलान्—केरल राज्य से होकर; तु—तथा; त्रिगर्तकान्—त्रिगर्त से होकर; गोकर्ण-आख्यम्—(उत्तरी कर्णाटक में अरब सागर के तट पर) गोकर्ण नामक; शिव-क्षेत्रम्—शिवजी के पवित्र स्थल; सान्निध्यम्—प्राकट्य; यत्र—जहाँ; धूर्जटेः—शिवजी की; आर्याम्—सम्मानित देवी (पार्वती, शिव-पत्नी); द्वैप—द्वीप में (गोकर्ण के निकट के तट से दूर); अयनीम्—रहने वाला; दृष्ट्वा—देखकर; शूर्पारकम्—शूर्पारक के पवित्र जिले में; अगात्—गये; बलः—बलराम; तापीम् पयोष्णीम् निर्विन्ध्याम्—तापी, पयोष्णी तथा निर्विन्ध्या नदियों में; उपस्पृश्य—जल छूकर; अथ—उसके बाद; दण्डकम्—दण्डक वन में; प्रविश्य—प्रवेश करके; रेवाम्—रेवा नदी तक; अगमत्—गये; यत्र—जहाँ; माहिष्मती पुरी—माहिष्मती नगरी में; मनु-तीर्थम्—मनुतीर्थ को; उपस्पृश्य—जल छूकर; प्रभासम्—प्रभास; पुनः—फिर; आगमत्—आये।

तब भगवान् ने केरल तथा त्रिगर्त राज्यों से होकर यात्रा करते हुए भगवान् शिव की पवित्र नगरी गोकर्ण देखी, जहाँ साक्षात् भगवान् धूर्जटि (शिव) प्रकट होते हैं। इसके बाद एक द्वीप में निवास करने वाली देवी पार्वती का दर्शन करके बलरामजी पवित्र शूर्पारक जिले से होकर गुजरे और तापी, पयोष्णी तथा निर्विन्ध्या नदियों में स्नान किया। तत्पश्चात् वे दण्डकारण्य में प्रविष्ट हुए और रेवा नदी गये, जिसके किनारे माहिष्मती नगरी स्थित है। फिर उन्होंने मनुतीर्थ में स्नान किया और अन्त में प्रभास लौट आये।

श्रुत्वा द्विजैः कथ्यमानं कुरुपाण्डवसंयुगे ।
 सर्वराजन्यनिधनं भारं मेने हतं भुवः ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

श्रुत्वा—सुनकर; द्विजैः—ब्राह्मणों द्वारा; कथ्यमानम्—सुनाये जा रहे; कुरु-पाण्डव—कुरुओं तथा पाण्डवों के बीच; संयुगे—युद्ध में; सर्व—सभी; राजन्य—राजाओं के; निधनम्—संहार को; भारम्—भार को; मेने—सोचा; हतम्—हटाया हुआ; भुवः—पृथ्वी के।

भगवान् ने कुछ ब्राह्मणों से सुना कि किस तरह कुरुओं तथा पाण्डवों के बीच युद्ध में भाग लेने वाले सारे राजा मारे जा चुके थे। इससे उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि अब पृथ्वी अपने भार से मुक्त हो गई है।

स भीमदुर्योधनयोर्गदाभ्यां युध्यतोर्मृधे ।
 वारयिष्यन्विनशनं जगाम यदुनन्दनः ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

सः—उसने, बलरामजी ने; भीम-दुर्योधनयोः—भीम तथा दुर्योधन के बीच; गदाभ्याम्—गदाओं से; युध्यतोः—लड़ते हुए; मृधे—युद्धक्षेत्र में; वारयिष्यन्—मना करने की इच्छा करते हुए; विनशनम्—युद्धक्षेत्र तक; जगाम—गये; यदु—यदुओं के; नन्दनः—प्रिय पुत्र (बलराम)।

उस समय युद्धक्षेत्र में भीम तथा दुर्योधन के मध्य चल रहे गदा-युद्ध को रोकने की इच्छा से बलरामजी कुरुक्षेत्र गये।

युधिष्ठिरस्तु तं दृष्ट्वा यमौ कृष्णार्जुनावपि ।

अभिवाद्याभवंस्तुष्णीं किं विवक्षुरिहागतः ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

युधिष्ठिरः—राजा युधिष्ठिर ने; तु—लेकिन; तम्—उसे, बलराम को; दृष्ट्वा—देखकर; यमौ—जुड़वाँ भाई, नकुल तथा सहदेव ने; कृष्ण-अर्जुनौ—कृष्ण तथा अर्जुन ने; अपि—भी; अभिवाद्या—नमस्कार करके; अभवन्—थे; तुष्णीम्—मौन; किम्—क्या; विवक्षुः—कहना चाहते हुए; इह—यहाँ; आगतः—आया है।

जब युधिष्ठिर, कृष्ण, अर्जुन तथा जुड़वाँ भाई नकुल तथा सहदेव ने बलराम को देखा, तो उन सबों ने उन्हें नमस्कार किया, किन्तु यह सोचते हुए कि “ये हमें क्या बतलाने आये हैं” वे सब मौन रहे।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद लिखते हैं, “उनके मौन रहने का कारण यह था कि बलरामजी दुर्योधन के प्रति कुछ-कुछ स्नेहिल थे, क्योंकि उसने उनसे गदा-युद्ध की कला सीखी थी। इसलिए जब युद्ध चल रहा था, तो राजा युधिष्ठिर तथा अन्यो ने सोचा कि हो सकता है कि बलरामजी दुर्योधन के पक्ष में कुछ कहने आये हों। इसीलिए वे मौन रहे।”

गदापाणी उभौ दृष्ट्वा संरब्धौ विजयैषिणौ ।

मण्डलानि विचित्राणि चरन्ताविदमब्रवीत् ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

गदा—गदाएँ; पाणी—हाथ में लिए; उभौ—दोनों को, दुर्योधन तथा भीम को; दृष्ट्वा—देखकर; संरब्धौ—क्रुद्ध; विजय—जीत; एषिणौ—के लिए प्रयत्नशील; मण्डलानि—चक्र, गोले; विचित्राणि—कलात्मक; चरन्तौ—घूमते हुए; इदम्—यह; अब्रवीत्—कहा।

बलराम ने देखा कि दुर्योधन तथा भीम अपने अपने हाथों में गदा लिए कलात्मक ढंग से चक्कर लगाते क्रोध से भरे हुए एक-दूसरे पर विजय पाने के लिए प्रयत्नशील हैं। भगवान् ने उन्हें इस प्रकार सम्बोधित किया।

युवां तुल्यबलौ वीरौ हे राजन्हे वृकोदर ।

एकं प्राणाधिकं मन्ये उतैकं शिक्षयाधिकम् ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

युवाम्—तुम दोनों; तुल्य—समान; बलौ—बल या पौरुष में; वीरौ—योद्धा; हे राजन्—हे राजन् (दुर्योधन); हे वृकोदर—हे भीम; एकम्—एक; प्राण—जीवनी-शक्ति में; अधिकम्—अधिक; मन्ये—मानता हूँ; उत—दूसरी ओर; एकम्—एक; शिक्षया—प्रशिक्षण में; अधिकम्—बढ़कर ।

[बलरामजी ने कहा] : हे राजा दुर्योधन, हे भीम, सुनो तो, तुम दोनों योद्धा युद्ध-बल में समान हो। मैं जानता हूँ कि तुम दोनों में से एक में शारीरिक बल अधिक है, जबकि दूसरा कला में अधिक प्रशिक्षित है।

तात्पर्य : भीम शारीरिक दृष्टि से अधिक बलवान था, किन्तु दुर्योधन गदा चलाने की कला में अधिक निपुण था।

तस्मादेकतरस्येह युवयोः समवीर्ययोः ।

न लक्ष्यते जयोऽन्यो वा विरमत्वफलो रणः ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

तस्मात्—इसलिए; एकतरस्य—दोनों में से किसी एक का; इह—यहाँ; युवयोः—तुम दोनों का; सम—तुल्य; वीर्ययोः—पौरुष वाले; न लक्ष्यते—दिखाई नहीं पड़ता; जयः—विजय; अन्यः—विपरीत (हार); वा—अथवा; विरमतु—रुक जाना चाहिए; अफलः—व्यर्थ; रणः—युद्ध ।

चूँकि तुम दोनों युद्ध-बल में बिल्कुल एक-जैसे हो अतः मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि इस द्वन्द्व में तुम में से कोई कैसे जीतेगा या हारेगा। अतएव कृपा करके इस व्यर्थ के युद्ध को बन्द कर दो।

न तद्वाक्यं जगृहतुर्बद्धवैरौ नृपार्थवत् ।

अनुस्मरन्तावन्योन्यं दुरुक्तं दुष्कृतानि च ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; तत्—उसके; वाक्यम्—शब्दों को; जगृहतुः—दोनों ने स्वीकार किया; बद्ध—स्थिर; वैरौ—शत्रुता; नृप—हे राजा (परीक्षित); अर्थ-वत्—विवेकशील; अनुस्मरन्तौ—स्मरण रखते हुए; अन्योन्यम्—एक-दूसरे को; दुरुक्तम्—कटु वचन; दुष्कृतानि—दुष्कर्म; च—भी।

[शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा] : हे राजन्, तर्कपूर्ण होने पर भी बलरामजी के अनुरोध को उन दोनों ने स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनकी पारस्परिक शत्रुता कट्टर थी। वे दोनों ही एक-दूसरे पर किये गये अपमानों तथा आघातों को निरन्तर स्मरण करते आ रहे थे।

दिष्टं तदनुमन्वानो रामो द्वारवतीं ययौ ।

उग्रसेनादिभिः प्रीतैर्ज्ञातिभिः समुपागतः ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

दिष्टम्—भाग्य को; तत्—उस; अनुमन्वानः—निश्चित करते हुए; रामः—बलरामजी; द्वारवतीम्—द्वारका; ययौ—चले गये; उग्रसेन-आदिभिः—उग्रसेन इत्यादि द्वारा; प्रीतैः—प्रफुल्लित; ज्ञातिभिः—अपने पारिवारिक जनों द्वारा; समुपागतः—सत्कार किया गया ।

इस निष्कर्ष पर पहुँचते हुए कि युद्ध विधाता द्वारा आयोजित होता है, बलरामजी द्वारका लौट गये। वहाँ उग्रसेन ने तथा उनके अन्य सम्बन्धियों ने उनका स्वागत किया, जो सभी उन्हें देखकर प्रफुल्लित थे।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती दिष्टम् शब्द अर्थात् भाग्य की व्याख्या करते हुए यह कहते हैं कि यह शब्द सूचित करता है कि भीम तथा दुर्योधन के मध्य का युद्ध भगवान् कृष्ण के आदेश के कारण था और उन्हीं के द्वारा आरम्भ करवाया गया था।

तं पुनर्नैमिषं प्राप्तमृषयोऽयाजयन्मुदा ।

क्रत्वङ्गं क्रतुभिः सर्वैर्निवृत्ताखिलविग्रहम् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

तम्—उसको, बलराम को; पुनः—फिर; नैमिषम्—नैमिषारण्य; प्राप्तम्—पहुँचे हुए; ऋषयः—ऋषिगण; अयाजयन्—वैदिक यज्ञ में व्यस्त; मुदा—प्रसन्नतापूर्वक; क्रतु—समस्त यज्ञों के; अङ्गम्—अंगस्वरूप; क्रतुभिः—अनुष्ठानों से; सर्वैः—सभी प्रकार के; निवृत्त—परित्यक्त किया गया; अखिल—समस्त; विग्रहम्—युद्ध ।

बाद में बलरामजी नैमिषारण्य लौट आये, जहाँ ऋषियों ने समस्त यज्ञों के साक्षात् रूप उन्हें प्रसन्नतापूर्वक विविध प्रकार के वैदिक यज्ञों को सम्पन्न करने में लगा दिया। अब बलरामजी समस्त युद्धों से निवृत्ति प्राप्त कर चुके थे।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद लिखते हैं: “ [जब बलराम] पवित्र तीर्थस्थल नैमिषारण्य गये तो ऋषियों, सन्त-पुरुषों तथा ब्राह्मणों ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। वे समझ गये कि यद्यपि बलराम क्षत्रिय हैं, किन्तु अब युद्ध-कार्य से निवृत्ति प्राप्त कर चुके हैं। सदैव सुख-शान्ति के पक्षधर ब्राह्मण तथा ऋषिगण इससे अत्यन्त प्रसन्न हुए। सभी ने अत्यन्त स्नेहपूर्वक श्री बलरामजी का आलिङ्गन किया तथा नैमिषारण्य नामक पवित्र स्थान में विभिन्न प्रकार के यज्ञ सम्पन्न करने के लिए उन्हें प्रेरित किया। वास्तव में बलराम का साधारण मनुष्यों के लिए संस्तुत यज्ञ से कोई प्रयोजन नहीं था, वे तो भगवान् हैं, अतएव वे स्वयं ऐसे समस्त यज्ञों के भोक्ता हैं। फलतः यज्ञ निष्पादित करने का उनका अनुकरणीय

कार्य सामान्य जन को यह पाठ पढ़ाने के हेतु था कि किस तरह वेदों के आदेशों का पालन करना चाहिए।”

तेभ्यो विशुद्धं विज्ञानं भगवान्व्यतरद्विभुः ।

येनैवात्मन्यदो विश्वमात्मानं विश्वगं विदुः ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

तेभ्यः—उन्हें; विशुद्धम्—एकदम शुद्ध; विज्ञानम्—दैवी ज्ञान; भगवान्—भगवान् ने; व्यतरत्—प्रदान किया; विभुः—सर्वशक्तिमान; येन—जिससे; एव—निस्सन्देह; आत्मनि—अपने भीतर; अदः—यह; विश्वम्—ब्रह्माण्ड; आत्मानम्—अपने को; विश्व-गम्—ब्रह्माण्ड में व्याप्त; विदुः—वे अनुभव कर सके।

सर्वशक्तिमान भगवान् बलराम ने ऋषियों को शुद्ध आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान किया, जिससे वे सभी बलरामजी के भीतर सारे ब्रह्माण्ड को देख सकें और यह भी देख सकें कि वे हर वस्तु में समाये हुए हैं।

स्वपत्यावभृथस्नातो ज्ञातिबन्धुसुहृद्वृतः ।

रेजे स्वज्योत्स्येवेन्दुः सुवासाः सुष्ट्रवलङ्कृतः ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

स्व—अपनी; पत्या—पत्नी सहित; अवभृथ—यज्ञ-दीक्षा के अन्त का सूचक अवभृथ अनुष्ठान; स्नातः—स्नान किये हुए; ज्ञाति—अपने निकट सम्बन्धियों द्वारा; बन्धु—अन्य सम्बन्धीजन; सुहृत्—तथा मित्रगण; वृतः—घिरे हुए; रेजे—भव्य लग रहे थे; स्व-ज्योत्स्यया—अपनी ही किरणों समेत; इव—सदृश; इन्दुः—चन्द्रमा; सु—सुन्दर; वासाः—वस्त्र पहने; सुष्ट्र—सुन्दर; अलङ्कृतः—सजे हुए।

अपनी पत्नी के साथ अवभृथ स्नान करने के बाद सुन्दर वस्त्रों से सज्जित और अलंकारों से विभूषित तथा अपने निकट सम्बन्धियों, अन्य परिवार वालों एवं मित्रों से घिरे बलरामजी ऐसे भव्य लग रहे थे, मानो तेजयुक्त अपनी किरणों से घिरा हुआ चन्द्रमा हो।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद ने इस दृश्य का सुन्दर ढंग से इस प्रकार वर्णन किया है : “तत्पश्चात् श्री बलराम ने अवभृथ स्नान किया जिसे यज्ञ-सम्बन्धी क्रियाओं की समाप्ति होने पर सम्पन्न किया जाता है। स्नान करने के पश्चात् उन्होंने नवीन कौशेय (रेशमी) वस्त्र धारण किये और अपने सम्बन्धियों तथा मित्रों के मध्य स्वयं को सुन्दर आभूषणों से सज्जित किया। वे आकाश में अनेक नक्षत्रों के बीच प्रकाशमान पूर्ण-चन्द्रमा के समान प्रतीत हो रहे थे।

ईदृग्विधान्यसङ्ख्यानि बलस्य बलशालिनः ।

अनन्तस्याप्रमेयस्य मायामर्त्यस्य सन्ति हि ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

ईदृक्-विधानि—इस प्रकार के; असङ्ख्यानि—अनगिनत; बलस्य—बलराम के; बल-शालिनः—बलशाली; अनन्तस्य—अनन्त; अप्रमेयस्य—अप्रमेय, असीम; माया—अपनी माया-शक्ति द्वारा; मर्त्यस्य—मर्त्यों के; सन्ति—हैं; हि—निस्सन्देह।

उन अनन्त तथा अप्रमेय बलशाली भगवान् बलराम द्वारा असंख्य अन्य लीलाएँ सम्पन्न की गईं, जो अपनी योगमाया से मनुष्य के रूप में दिखते हैं।

योऽनुस्मरेत रामस्य कर्माण्यद्भुतकर्मणः ।

सायं प्रातरनन्तस्य विष्णोः स दयितो भवेत् ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

यः—जो भी; अनुस्मरेत—नियमित रूप से; रामस्य—बलराम के; कर्माणि—कार्यकलाप; अद्भुत—आश्चर्यजनक; कर्मणः—जिनके सारे कर्म; सायम्—सायंकाल; प्रातः—प्रातःकाल; अनन्तस्य—अनन्त के; विष्णोः—विष्णु का; सः—वह; दयितः—प्रिय; भवेत्—बन जाता है।

अनन्त भगवान् बलराम के सारे कार्यकलाप चकित कर देने वाले हैं। जो कोई भी प्रातः तथा सायं उनका निरन्तर स्मरण करता है, वह भगवान् श्री विष्णु का अत्यन्त प्रिय बन जाता है।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद लिखते हैं: “श्री बलराम मूल विष्णु हैं, अतएव जो व्यक्ति प्रातःकाल तथा सायंकाल भगवान् बलराम की लीलाओं का स्मरण करेगा वह निश्चय ही पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का महान् भक्त बनेगा और इस प्रकार प्रत्येक दृष्टि से उसका जीवन सफल हो जायेगा।”

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत “भगवान् बलराम की तीर्थयात्रा” नामक उन्यासिवें अध्याय के श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।